कामरेड शंकर गुहा नियोगी
के
तीन लेख

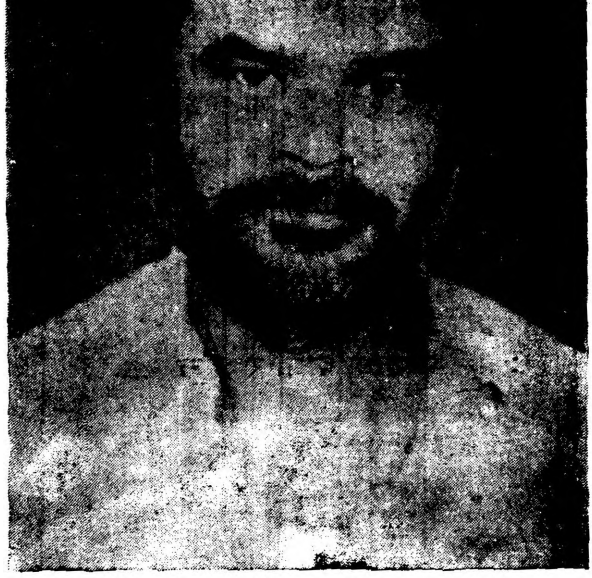

शहीद शंकर गुहा नियोगी यादगार समिति
लोक साहित्य परिषद

प्रकाशन काल : २८ अक्टूबर १९९१
संशोधित द्वितीय संस्करण : १९ दिसम्बर, १९९१

सहायता राशि : चार रुपये

प्रकाशक : लोक साहित्य परिषद
द्वारा छत्तीसगढ़ मुक्ति मोर्चा
सी. एम. एस. एस. आफिस
दल्ली राजहरा
दुर्ग (मध्य प्रदेश) ४९१-२२८

मुद्रक : बजाज प्रिंटर्स, दल्ली राजहरा

१. संसदीय प्रणाली बनाम राष्ट्रपति प्रणाली ३
२. राजीव हत्याकांड और अंतर्राष्ट्रीय पृष्ठ भूमि १०
३. चौराहे पर खड़े देश को कौन दिशा देगा १९

ये तीन लेख १९९१ के जनवरी, मई व जून महीने में लिखे गये थे। कामरेड नियोगी इसी कड़ी में और दो लेख लिखने वाले थे। लेकिन उससे पहले ही जनता के दुश्मन राक्षसों ने उनका कत्ल कर दिया।

संसदीय प्रणाली बनाम राष्ट्रपति प्रणाली

१. देश की वर्तमान अवस्था में एक लोकप्रिय सरकार की अनुपस्थिति में, वर्तमान संसदीय प्रणाली पर फिर से सवाल उठाये जा रहे है। कहीं कहीं राष्ट्रपति प्रणाली का भी जिक्र आ रहा है। देश की नीति और योजनाएं अब संसदीय प्रणाली के तहत तय होती है, यह संसदीय प्रणाली के तहत सरकार चलाई जाती है तब विभिन्न राजनैतिक पार्टियों द्वारा संसद में बहस कर सत्ता धारी राजनैतिक पार्टी की वोट शक्ति द्वारा उन नीति एवं योजनाओं को लागू करने के लिए कानून बनाये जाते हैं।

राष्ट्रपति प्रणाली में सत्ता की शीर्ष पर व्यक्ति की प्रधानता रहती है। और को नीति निर्धारण में राष्ट्रपति का वर्चस्व रहता है।

जब अर्थनीति एवं राजनीति में अस्थिरता एवं अनिश्चितता व्याप्त होती है उस समय व्यवस्था में व्यक्ति प्रधानता पर जोर दिया जाता है। जिसमें व्यवस्था की तमाम खराबियां, नीतियों की गड़बड़ियां उस व्यक्ति के मत्थे पर डाल कर व्यवस्था निश्चिन्त हो जाती है। राष्ट्रपति प्रशासन में समय-समय पर तानाशाही हुकुमत जारी रखने की सुविधा भी रहती है।

२. मां न बन पाने पर यह जरूरी नही है कि स्त्री बांझ हो। बेशक वर्तमान संसदीय व्यवस्था चरमरा गई है। सारी राजनैतिक पार्टियों के नेताओं से लेकर कार्यकर्ता तक हर पांच साल में, हाथ पर हाथ धरे एक लहर के इंतजार में बैठे रहते हैं। गरीबी हटाओ लहर, इंदिरा लहर, जनता लहर, सहानुभूति लहर ऐसी बहुत सी लहरें देश में व्याप्त इस राजनैतिक जड़ता को क्षणिक जीवन देती हैं। लहर के अभाव में नकारात्मक वोट संगठित नहीं हो पाते और समय-समय पर एक पार्टी का बहुमत के अभाव में दलबदल की प्रवृत्ति आदि के कारण संसदीय व्यवस्था संकट ग्रस्त हो जाती है। इस संकट से उभरने के लिए लोग कारणों की गहराई तक पहुचने की इच्छा न रखकर, संसदीय प्रणाली की जगह राष्ट्रपति प्रणाली की मांग कर स्वर्ग सुख का अनुभव करते हैं।

हमें इस बांझपन को दूर करने के लिए कारणों की गहराई तक पहुंच कर सक्रियता और सृजनशीलता के जरिए, समस्याओं को दूर कर जनवादी प्रक्रिया में प्राण फूंकना होगा।

३. गुलामी के खिलाफ संघर्ष के दिनों में हमारे तत्कालीन राजनेताओं के दिलो दिमाग में उन्हीं अंग्रेजों के पार्लियामेंट का गहरा असर था जिन्होंने हमें गुलाम बनाकर रखा था। यह सही है कि ब्रिटिश संसदीय प्रणाली ने सामन्तवादी प्रवृत्तियों के खिलाफ पूंजीपति जनवाद को प्रतिष्ठित कर एक प्रगतिशील भूमिका निभाई। ब्रिटिश पार्लियामेन्ट की अवधारणा से परिचित व प्रेरित राजनेताओं ने भारत में संसदीय प्रणाली से राजकाज चलाने के लिए साम्राज्यवाद के खिलाफ संघर्ष छेड़ा। "अंग्रेज भगाओ" के नारे के जरिए भविष्य की संसदीय प्रणाली के लिए जनाधार बनाने के विभिन्न कार्यक्रम किए गये। हर एक राष्ट्रवादी आंदोलन (विदेशी कपड़ों की होली जलाया) कर एवं बेकारी के खिलाफ संघर्ष, नमक आंदोलन, नील कर, झारखंड इलाके के बेगारी के खिलाफ संघर्षों से व्यापक जनाधार का निर्माण हुआ। महात्मा गांधी ने नेतृत्व में दलितों का मंदिर प्रवेश, शराब बंदी, चरखा आंदोलन (परंपरागत उद्योगों की स्थायित्व देने का प्रतीक) आदि सामाजिक भेदभाव के खिलाफ जेहाद छेड़ा था। साम्यवादियों/समाजवादियों ने मजदूरी बढ़ाने के और जमीन पर किसान के मालिकाना हक के लिए जो आंदोलन किए उससे भी, अमीर एवं गरीबों की खाई कम करने के संघर्ष से संसदीय प्रणाली के लिए आवश्यक जनवादी चेतना का विकास हुआ।

४, संसदीय प्रणाली को लक्ष्य बनाकर, आजादी के लड़ाई के दौरान संघर्षों की एक के बाद एक लहर उठती गई। संसदीय प्रणाली राजसत्ता प्राप्ति के बाद ही लागू हो सकेगी, इसलिए "आजादी हमारा जन्म सिद्ध अधिकार है" यह स्वीकार किया गया। राजसत्ता प्राप्ति के संघर्ष में राष्ट्रीय कांग्रेस में तीन धाराये आजादी प्राप्ति तक बरकरार रही। सुभाष बोस के नेतृत्व में आजाद हिन्द फौज, जिसका आजादी

प्राप्ति का अन्तिम महत्वपूर्ण कार्यक्रम था। महात्मा गाँधी के नेतृत्व में "करो या मरो", "अंग्रेजों भारत छोड़ो" तथा अगस्त क्रांति का बिगुल फूका गया था। तेलंगाना, काकद्वीप पुन्नाप्रा–वायलर, शोलापुर आदि क्षेत्र के क्रांतिकारी संघर्षो एवं हावड़ा बम्बई मजदूर आंदोलनों एवं समाजवादियों द्वारा छेड़ा गया यू. पी., बिहार के किसान आंदोलन ने भी व्यापक जन समर्थन जुटाया जिससे भविष्य की संसदीय प्रणाली की जड़ें मजबूत हुई।

मतलब इस बात से नहीं है हर आंदोलन को विजय श्री प्राप्त हुई या नहीं। आंदोलन में भाग लेने वाली करोड़ों जनता एक सुख शांति वाली व्यवस्था की कल्पना अपने दिलों में सजोए हुए थे। जन आकांक्षाओं की मूर्त रुप से समृद्ध, भावनात्मक एकता और उससे निकल कर आए अनेकों लोकप्रिय नेता जिन्होंने नैतिकता बोध से ओत प्रोत होकर, त्याग और बलिदान की राह पर चल कर भारतीय की पहली संसार में अपनी महत्वपूर्ण भूमिका को अदा करता रहा। राजनैतिक नेतागण उन दिनों बहस से नहीं डरते थे और राजनैतिक विचारों को जनता के अंतिम व्यक्ति तक पहुंचाने के लिए अपने कर्त्तव्य का पालन करते रहें। आज अविश्वसनीय लगता है कि एक ट्रेडिल प्रेस में छपे हुए अखबार की प्रति लेकर पार्टी कार्यकर्ता जनता में विचारों की आदान प्रदान करते थे। कभी कभी तो अखबार की प्रति फट जाती थी, फिर भी कार्यकर्ता उन प्रतियों को आदर के साथ संरक्षित करते थे। आज जबकि आफसेट प्रेस, टी. वी., रेडियो के जमाने में भी अर्थ-नीति, राजनीति या सांस्कृतिक मुद्दों पर विचार शून्यता व्याप्त है। सन १९५२ के संसद में कम्युनिस्ट एवं समाजवादी दलों ने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। १९५७ के चुनाव में तो केरल की प्रांतीय सरकार पर कम्युनिस्टों का-कब्जा हो गया। राम मनोहर लोहिया के नेतृत्व में बिहार, यू. पी. की प्रांतीय राजनीति में उसूलों और मुद्दों पर बहस युद्ध छेड दिया गया। उन दिनों लहर की राजनीति थी।

५ अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति का प्रभाव :-

द्वितीय विश्वयुद्ध के पश्चात सोवियत रुस एक महाशक्ति

के रुप में उभरा। फासीवाद की करारी मात से राष्ट्रवाद एवं राष्ट्रीय-वादी मुक्ति आंदोलन को बल मिला। द.पू. एशिया, चीन, एवं आफ्रीका के देशों में जन-आंदोलन नई ऊचांइयों पर पहुंचें। सोवियत रूस को दुनिया के जनवादियों ने अपनी विजय माना और इस विजय की चकाचौंध में लोंगो ने सामन्तवादी संस्कार एवं अर्थनीति को नजर अंदाज कर दिया क्योंकि सोवियत रुस में पूंजीवादी के खिलाफ समाजवादियो की विजय हुई थी (१९१७)। समाजवादी/साम्यवादी विचार धारा ने पूंजीवादी के खिलाफ कठोर और कठिन संघर्ष में, पूंजीवाद को वैचारिक एवं राजनैतिक रुप से शिकस्त दी थी, परन्तु तीसरी दुनिया के देशों में सामन्तवाद उन देशों की पूंजीवाद विकास की राह में रोड़ा बनता गया। उन देशों में अविकसित पूंजीवाद सामन्तवादी संस्कार एवं अर्थ-नीति के खिलाफ संघर्ष में विजय का झंडा फहरा नहीं पाया था। फिर भी इस सच्चाई को नकारने के कारण साम्यवादियों ने, पथभ्रष्ट होकर, अविकसित पूंजीवाद को ही अपना निशाना बना लिया। इस गलत दिशा निर्देशन का फायदा, बहुराष्ट्रीय कंपनियों ने उठाया और बहुराष्ट्रीय कंपनियों के साथ तीसरी दुनियां के सामन्त वादियों का एक अपवित्र गठबंधन तैयार हुआ। इस परिस्थिति में देशी पूंजी को जिसमें देशी पूंजीपतियों बिना पेंदे के लोटे की भांति हां में हां मिलाने का तोता रटने में ही कुशलता हासिल की। भारत की संसदीय प्रणाली मे भी उसका असर रहा और इसलिए चमचावाद को बल मिला। समाजवादी आंदोलन की चकाचौंध में यह सच्चाई सभी की नजरों से ओझल हो गई।

इस परिस्थिति में, एक नई राजनैतिक परंपरा का उदय हुआ। जो तत्व और तथ्यों से परे, तर्कहीन, क्षणिक भावना पर आश्रित यह विचार धारा मस्ती से जनता को तोड़ने के कार्य में जुटे रहे। सांप्रदायिक दंगे, भाषा-भाषी लडाइयों को राजनैतिक धाराओं से गर्मी देती हैं।

६. नेहरु के नेतृत्व में जो मिश्रित अर्थनीति की डफली बजाई गई, उसने हमारी संसदीय प्रणाली के जीवन प्राण जनवादिता को नोच

डाला। बहुराष्ट्रीय जानसन बेबीपाउडर जैसों का रूप लेकर बहुराष्ट्रीय कम्पनी का अजगर का प्रवेश हुआ। मिश्रित अर्थनीति के तहत लाई-सेंस पालिसी, टेक्स पालिसी इस ढंग से बनाया गया कि सिर्फ काला धन ही पनप सकता था। भ्रष्टाचार बढ़ता गया, एक नये वर्ग का उदय हुआ वह था नवधनाड्य वर्ग।

७. कार्यपालिका नौकरशाही ढांचे पर आधारित होती है। १९४७ से पहले जो नौकरशाही बिलायत की पूंजीवादी नौकरशाही ढांचा से प्रभा-वित होता था, इसलिए उसमें पूंजीवादी नैतिकता के गुण मौजूद थे। आजादी के बाद हमारा नौकरशाही ढांचा भी अधोपतित हुआ एवं देशी सामन्ती संस्कार नौकरशाहों पर हावी हो गया इस अपंग राजनैतिक संस्कार का फायदा नवधनाड्य वर्ग ने उठाया। यह अपंग राजनैतिक संस्कार संसद में भी प्रतिबिंबित हुआ। देश धीरे धीरे दिशाहीनता से ग्रसित हो गया। दिशाहीनता से भ्रष्टाचार हावी हो गया। संसदीय प्रणाली भी उससे अछुता नहीं रह पाई। आजादी के पहले एवं उसके तत्काल बाद मुद्दों एवं नीतियों पर चर्चा करने का जो परम्परा बनी थी वह समाप्त हो गयी। काला धन राजनीति में अपना खेल जमाना शुरू किया, अर्थनीति की दिशाहीनता से जिस काले धन का समावेश हुआ उसी कालाधन को लेकर नवधनाड्य वर्ग ने राजनीति में अपना सिक्का जमा लिया।

आज की राजनीति में टाटा-बिरला की जितनी पकड़ है, अम्बानी बाडिया का असर उससे कोई कम नहीं है। "ईश्वर अल्लाह तेरे नाम" आज उतना महत्वपूर्ण नहीं हैं, जितना कि अयोध्या में राम मंदिर का। उस जमाने में टाटा-बिरला के कैम्प में संसद सदस्य रहा करते थे, आज सिम्पलेक्स या केडिया भी अपने अपने झोलों में दो-चार संसद सदस्य रखते हैं।

इस ऐतिहासिक परिपेक्ष में अपने राजनैतिक रथ को प्रति-क्रियावादी मारकोस राष्ट्रपति की शासन दिशा में मोड़ना बेशक हमें मंजूर नहीं।

८. एक नये राष्ट्रीय व जनवादी आंदोलन के तहत देश के बुद्धिजीवी एवं राष्ट्रभक्तों को चर्चा का वैचारिक युद्ध छेड़कर नवधनाड्यों को राष्ट्रवादी बनाना होगा। इस राष्ट्रीय आंदोलन के तहत :-

(१) बहुराष्ट्रीय कम्पनियों के साथ नवधनाढ्य के सहयोग पर पूर्ण पाबन्दी लगाई जाए।

(२) स्वदेशी उद्योगीकरण का आंदोलन छेड़ा जाए।

(३) विज्ञापन आदि के जरिये मध्यम वर्ग को प्रलोभित एवं प्रभावित कर एयासी/उपभोगवाद पर रोक लगाई जाय एवं इंसान की जरूरत को नए सिरे से परिभाषित किया जाय, जो राष्ट्रीय विकास में सहायक हो।

(४) देश के विभिन्न प्रांतों के असम विकास को दूर करने के लिए बहुस्तरीय संघीय प्रणाली और छोटे राज्यों व छोटे जिलों के निर्माण के जरिये नया प्रशासनिक ढांचा कायम हो।

(५) मानवीय मूल्यों एवं नागरिक अधिकारों को महत्व देकर इंसा-नियत (स्वस्थ संस्कृति) को विकसित किया जावे।

जनवादी संस्थाओं से तीसरे दर्जे के व्यक्तियों को निकाल-बाहर कर नवधनाड्य वर्ग से मुक्त संघर्षशील व्यक्तियों को प्रतिष्ठित किया जाय जो हर पार्टी में मौजूद है।

कार्यकर्ताओं की नियुक्ति, जागरूकता के मान को उच्चता पर पहुंचा कर हो, न कि राजीव गांधी स्टाईल में पुलिसिया रिपोर्ट के आधार पर।

९. क्योंकि "गुलाम ही गुलामी की व्यवस्था खींच कर ले जा रहा है", इसलिए अगर इसी पर तसल्ली की जाय तो देश में अराजकता फैलाना अवश्य है।

अब समय आ चुका है कि "देश के सबसे गरीब पर नजर रखते हुए योजनाओं पर बल देना", क्योंकि "जनता ही निर्णायक है" और जनता की अस्मिता बरकरार रखने वाली अर्थनीति, राजनीति एवं संस्कृति स्थापित करने के लिए संसदीय जनवादी प्रक्रिया की रूप-रेखा तैयार करनी ही होगी।

१०. अपनी पार्टी की राजनीति के प्रति प्रतिबद्धता :–

कालाधन एवं नवधनाड्य वर्ग इतना ताकतवर हो गया है कि राजनैतिक संस्थान में जनवादी प्रक्रिया को पूरी तरह नकार दिया है। नवधनाड्य वर्ग तात्कालिक माँगों या सहूलियत के लिए सभी राजनैतिक पार्टियों में बहुकेन्द्रीयता स्थापित/पैदा हुई है। चरम अनुशासनहीनता, जिसे दल बदल कानून भी नहीं रोक पाया, इसी बहुकेन्द्रीयता को दर्शाता है।

११. राजनैतिक समस्यायें जटिलतर हो रही है और नेतृत्व में इसे हल करने की इच्छा शक्ति ही नहीं है। जिस चन्द्रशेखर ने नई औद्योगिक नीति की तीव्र व खुली आलोचना की थी, वह ही प्रधानमंत्री बनने के बाद सबसे पहले उसी को लागू करने की घोषणा करते हैं। 'गरीबी हटाओ' से लेकर 'कर्जा माफी' तक सारे लुभावने नारे जनता को क्षणिक तसल्ली दें, वोट बैंक पक्का करने की नजर से किए जाते हैं। वर्तमान संसदीय राजनीति की चरम दुर्गति तो तब होती है जब आर्थिक मुद्दों पर नहीं राजनैतिक ढांचे पर नहीं देश के विकास के मूल्यांकन पर नहीं बल्कि तर्कहीन भावनात्मक धार्मिक मुद्दों पर राजनीति हावी होती है, जब स्वर्ण मंदिर से अयोध्या तक, भिंडरावाले और आडवानी जैसे व्यक्तित्व नेता कहलाते हैं। स्पष्टत: वर्तमान संसदीय प्रणाली की रथ कर्ण के रथ की तरह फंसा रहता है। कोई सारथी इसे हांक नहीं पाता।

१२. इधर जनता में घोर निराशा पैदा होती है, संसदीय प्रणाली में अविश्वास पैदा होता है। कोई भी राजनैतिक पार्टी जनता के पास जाकर अपना समथन जुटाने की हिम्मत नहीं करती। नवधनाड्य वर्ग आने वाली नई लहर के लिए गुपचुप नए गठबंधन/ध्रुवीकरण करता रहता है। यह गठबंधन संसदीय व्यवस्था, आर्थिक, राजनैतिक, सांस्कृतिक सभी मुद्दों को प्रदूषित कर डालती है।

हमारे करीबी देशों में भी जनवाद की यही तरंग स्पष्ट दिखती है नेपाल में सदियों की राजशाही के बाद जनतान्त्रिक पद्धति में पदार्पण किया है। बर्मा में जनवाद की लड़ाई भीतर ही भीतर सुलग रही है। पाकिस्तान में सर्वशक्तिमान सेना भी संसदीय चुनाव कराकर जनवादी पद्धति की औपचारिक मुहर लगवाने पर मजबूर हैं। बांगला देश में सैनिक शासन के खिलाफ अद्भुत आंदोलन में समूचा आवाम ही सड़कों पर उतर आया है।

(इस लेख का संक्षिप्त रूप इतवारी अमृत संदेश २० जनवरी १९९१ में छपवाया था।)

राजीव हत्याकांड और अंतर्राष्ट्रीय पृष्ठ भूमि

आजादी के बाद से ही नेहरूजी ने अपनी सोवियत परस्त नीतियों के तहत सोवियत सहयोग से भारत की आर्थिक एवं औद्योगिक बुनियाद को मजबूत करने का प्रयास शुरू किया। वायस ऑफ अमरीका की तिखी आवाज को नजर अंदाज करते हुए धीरे धीरे भारत के नौकरशाहों के बीच भी एक सोवियत परस्त समूह लगातार मजबूर होता गया। अपनी-अपनी अलग सूझबूझ के बावजूद लाल बहादूर शास्त्री, इंदिरा गांधी, भाजपाई विदेश मंत्री अटल बिहारी बाजपेई राजीव गाँधी व व्ही. पी. सिंह तक इस सोवियत परस्त नीति से ही संचालित होते रहे।

अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर समाजवादी खेमे के देशों में परिवर्तन की लहर चली जिसे वीरता के कैथोलिक चर्चो ने घंटा बजाकर त्वरित गति दी। रूस में कथित समाजवादी व्यवस्था के नाम पर राजकीय पूंजी, फल-फूल विशालकाय हुई। बढ़ती राजकीय पूंजी के साथ समाजवादी देश एक जटिल आर्थिक एवं राजनैतिक संकट के दलदल में फंस गये। क्योंकि राजकीय पूंजी भी पूंजी है और पूंजी के विकास की धारा पूंजीवादी पद्धति से ही निर्धारित होती है। नतीजा हमारे सामने है। समाजवादी पूर्वी जर्मनी ने अपनी अर्थनीति को निशर्त पूंजावादी पश्चिम जर्मनी की झोली में डाल दिया, रोमानिया से लिथुआनिया तक तमाम देश सोवियत केन्द्रीत सत्ता के विरुद्ध संघर्ष का शंखनाद कर अनिश्चितता के चौराहे पर खड़े हो गए। इन परिस्थितियों में भारत की सोवियत परस्त अर्थनीति में भी एकाएक अमुलचूक परिवर्तन की आवश्यकता महसूस की जाती है। यूं तो स्वचालित मशीनीकरण से उत्पादन वृद्धि के नाम पर पारम्परिक उद्योगों के स्वाभाविक विकास मे बाधा डालने सिलसिला तो इंदिराजी के प्रधानमंत्रित्व काल में शुरू हो चुका था, बहुराष्ट्रीय पूंजी को प्रश्रय भी सभी से मिलने लगा था। नई तकनीकी आयात करने के नाम पर संजय गांधी की मारुति उद्योग

में भारतीय अर्थतंत्र में जापानी बहुराष्ट्रीय कंपनी का सफर शुरु हुआ था मगर राजीव गांधी व वी. पी. सिंह, मित्सुबुसी, सुजुकी, टोयोटा, गाड़ियों को चलाकर बहुराष्ट्रीय पुंजीपतियों का तुष्टिकरण नहीं कर पाए हैं। युनियन कर्बाइट, बोफोर्स एच. डी. डब्लू, निप्पन स्टील मेनेसमेन -डिएग आदि कंपनियां भारतीय बाजार को पूरी तरह ग्रास करने पर तुली हैं। इसके लिए दूसरा उपाय भी क्या है? सद्दाम के इराक को रौंदकर भी डालर साम्राज्य दिन-ब-दिन रक्ताल्पता की बीमारी से ग्रस्त है। ब्रिटिश जनता पर टेक्स थोपने के बावजूद पाऊंड के साम्राज्य बरकरार न रखा जा सका। सोनी की सुरीली आवाज अमेरिका ड्राइंग रुम में स्थापित हो चुकी है। जर्मन एकता का जाज संगीत विश्व रँगमंच पर प्रतिष्ठित हो चुका है तथा सोवियत रुस और समाजवादी खेमें के अन्य देश दोदका की ओव्हडोज से जनित अल्कोहलिक के असर से कोमा की स्थिति पर पहुंच गए हैं। इस परिदृश्य में तृतीय विश्व का सबसे बड़ा देश भारत प्रथम विश्व से अछुता कैसे बचा रह सकता है।

कांग्रेस (ई) का आज भी भारत की राजनीति में वर्चस्व है। और अब सवाल यह कि सोवियत खेमे को छोड़कर राजीव के नेतृत्व में भारत को अमरीकी दरबार में क्या घुटना टिकाया जा सकता था? क्योंकि जिनने राजीव गांधी के राजनैतिक आधार की संरचना की वे सभी रूसी खेमे के समर्थक रहे हैं। बहुराष्ट्रीय पूंजीवाद की नजरों में राजीव गांधी की उपयोगिता समाप्त हो चुकी थी। ज्योति बसु का यह वक्तव्य कि 'आवश्यकता पड़ने पर वाम गठबंधन राजीव गांधी का समर्थन कर सकती है। और वेटिकन चर्च के गुबद से जारी किया गया पोप का यह फतवा कि 'कम्युनिस्ट के खिलाफ आखिरी युद्ध के लिए तैयार हो जाओ।' क्या वर्तमान परिस्थिति में राजीव की हत्या का कारण नहीं हो सकता?

० बहुराष्ट्रीय कम्पनियों का निर्लज्ज स्वरुप

उपनिवेशवाद दिन ब दिन बदचलन होता जा रहा है। स्वीडिश प्रधानमंत्री आलोफ पाल्मे मारे जाते हैं, एक्विनों जी अचानक सत्तारूढ़

हो जाती है, चुनाव में प्रचंड बहुमत पाकर भी बर्मा की समाजवादी डेमोक्रेटिक पार्टी को सत्ता में जाने से रोक दिया जाता है। इराक की सीमा के भीतर कुर्द शिविर स्थापित किये जानें पर भी संयुक्त राष्ट्र संघ को कोई तकलीफ नहीं होती। नशीली दवा खाकर भी अमरीकी धावक बेन जॉनसन प्रचार मंच पर हीरो बना रहता है, उसको रोकना मुश्किल कर काम हो जाता है। भोपाल गैस पीड़ित २ लाख जनता की अपाहिज कौम अपनी बात चीख-चीखकर रखने की लाख कोशिशों के बावजूद भी यूनियन कार्बाइड के निर्णय को डिगा न सके। और अब राजीव गांधी की हत्या कर दी गई। बहुराष्ट्रीय पूंजी के असर का इससे अधिक बेशर्मी भरा स्वरूप और क्या हो सकता है।

० औपनिवेशिक शक्तियों ने भाजपा को मोह लिया

बहुराष्ट्रीय पूंजी का भारत में एक विश्वासपात्र नुमाइंदा चाहिए और इसका गुण यह होना चाहिए कि वह देश में नव-उपनिवेश वादियों का ही समर्थक बना रहे। भाजपा की आर्थिक नीति के तीन मुख्य प्रवक्ता हैं,– लालकृष्ण आडवानी, एसोचेम के अध्यक्ष भाजपाई पूंजीपति वीरेन शाह व न्यूयार्क से लौटे अर्थशास्त्री डॉ. जया दुबाशी। वीरेन शाह देश की अर्थ व्यवस्था में बहुराष्ट्रीय कंपनियों को खुली छुट देने की मांग कर, आडवानी सार्वजनिक क्षेत्रों के निजीकरण की बात कर एवं दुबाशी द्वारा सार्वजनिक इस्पात उद्योग में संपूर्ण विदेशी मशीनीकरण पर कार्यरत कई लाख श्रमिकों की संख्या घटाकर १७ हजार करनें की निलज्जता पूर्वक वकालत कर बहुराष्ट्रीय कम्पनियों से 'विश्वसनीय दलाल' होने का सर्टिफिकेट प्राप्त कर लिया। बहु–राष्ट्रीय कम्पनियों ने भी इन्हे सहयोगी बनाकर भारतीय बाजार को पूरी तरह से अपनें प्रभुत्व में लाने का मंसूबा बिना चूका हैं।

जिस देश में १० करोड़ लोग बेरोजगार हो, मंहगाई अपने विकराल रूप मे खड़ी हो गरीबी के नीचे ३० करोड़ जनता हो अगर उस देश में बहुराष्ट्रीय कम्पनियों का शिकन्जा और कसते तो वहां की जनता को कीड़े-मकोड़ों की जिन्दगी ही जीनी होगी। और उन्हें ऐसी

स्थिति में रख पाना संभव कैसे होगा ।

आडवानी के नेतृत्व में भाजपा इसे संभव बनाने के लिए स्वयं राम का अवतार बनकर रामराज्य लाने की घोषणा करती है। ऐसा रामराज्य जहां तर्कहीन भावनाओं को उभारकर लोगों को एक दूसरे के खिलाफ जुझाया जा सके। और लोग जीने के लिए तर्कसंगत रास्ते न खोजकर 'राम भरोसे' जीते रहे। तर्कहीन भावना में डूबकर लोग राम का नाम जपते रहे, अनुशासन के नाम पर शोषण व अत्याचार के खिलाफ खुलने वाले मुह सिलते रहे, जैसे हिटलर ने ५० वर्ष पूर्व जर्मनी में किया था, वैसे फासीवाद राज में ही बहुराष्ट्रीय कम्पनियां अपना लूट को कारोबार के भविष्य को सुनिश्चित सोचते है।

भाजपा को अपनी राजनीति के लिए काले धन का एक जखीरा मिला है। इनकाम टेक्स चोर, मुनाफाखोर, मिलावट खोर व्यापारी, घूसखोरी से अनाप-शनाप पैसे कमाने वाले अवकाश प्राप्त नौकरशाह व सेना के उच्च अधिकारी, सिने कलाकार, शराब बनाने वाले डिस्टिलरी के मालिक, शराब के ठेकेदार और विभिन्न तरीकों से अचानक कमाई करने वाले आज के समय जमींदार वर्ग, नवधनाड्य वर्ग में बहुराष्ट्रीय कम्पनियों के इशारे पर भाजपा की फासीवादी राज-नीति को बढ़ाने के लिए अपने धन के जरिये उनके प्रचार-प्रसार का इन्तकाम किया।

दसवें लोकसभा हेतु चुनाव में देश के नागरिकों ने पहली बार भाजपा को इतनी चमक दमक के साथ चुनाव समर में उतरते देखा। इंडिया टुडे जैसे प्रतिष्ठित पत्रिका से लेकर समस्त राष्ट्रीय स्तर के समाचार पत्रों तथा विभिन्न क्षेत्रीय समाचार पत्रों तक सभी संचार माध्यमों का जिस तादाद में भाजपा ने उपयोग किया उसका मुकाबला भारत पर चालिस साल तक शासन करने काली सरकार भी न कर पायी। यह क्या अचानक हुई घटना है ? पोस्टरों, बैनरों, तथा वाहनों के काफिले और वाहनों पर चल रही इलेक्ट्रानिक मिडिया के भरपूर उपयोग ने इस चुनाव को सर्वाधिक खर्चीला साबित कर दिया

प्रचार प्रसार की इस वैभवशाली पद्धति की टक्कर लेने में दूसरे तो क्या कांग्रेस भी उनके उन्नीस भी नहीं रही।

० बहुराष्ट्रीय कम्पनियों का दाव विफल करना होगा

मतदान के पहले दौर से यह स्पष्ट हो चुका था कि तमाम साधनों को झोकने के बाद और जनमानस की आस्थाओं, आकांक्षाओं का दोहन करने के बावजूद भाजपा के लिए दिल्ली अभी बहुत दूर है। यह भी पुनः जाहिर था कि राजीव गांधी के नेतृत्व में कांग्रेस की जड़ें ग्रामीण भारत में अभी गहरी है।

इस परिस्थिति में रूबल को रास्ते से हटाकर डालर का मार्ग प्रशस्त करने के लिए व्याकुल मुनाफाखोर देशी-विदेशी धनाड्या के सामने राजीव के नेतृत्व वाली कांग्रेस के नेता राजीव की हत्या के अलावा रूबल का प्रभाव हटाने का कोई नहीं था। राजीव की मृत्यु के बाद सोवियत शासनाध्यक्ष का कोई महत्वपूर्ण वक्तव्य न आना या फ्रॉसीसी प्रधानमंत्री का इस घटना पर प्रतिक्रिया जाहिर करते समय हंसमुख बना रहना (जिसमें एक काम तो पूरा हुआ के भाव झलकते थे) साधारण संयोग है ?

अंतर्राष्ट्रीय परिदृश्य में एक के बाद एक साम्यवादी किलों का बढ़ते जाना और तृतीय विश्व में जन आंदोलन मार्क्सवादी सिद्धांतों से सुसज्जित क्रांतिकारी शक्तियों के बढ़ते संघर्षों का बढ़ते जाना साथ साथ हो रही घटनायें हैं। बर्मा में व्यापक एवं प्रबल जन समर्थन के साथ आये राजनैतिक उभार के बावजूद सत्ता से महफूज रह जाती है, इसके पीछे भी सोवियत राजनीति की असरहीनता साफ झलकती है।

निकारागुआ की सरकार ढह गई। सद्दाम को कुवैती चक्र-व्यूह में अभिमन्यु की तरह फंसाकर कौरवों ठहाके लगाये गये। प्रभाकर के नेतृत्व वाली लिट्टे आज भी स्वायत्तता के वैधानिक हक से वंचित है। नेपाल की राजनीति मे लाल सितारा अपनी जगह बना लेने के बावजूद सत्ता की दौड़ में पिछड़ गया अफ्रीकी अश्वेत नेता

नेल्सन मंडेला तीन दशक के लड़ाई के बावजूद सत्ता पर बैठे नस्लवादियों के खिलाफ कुछ भी न कर पाये। स्पष्टतः सोवियत खेमे के वर्चस्व का अन्त व उसकी तीसरी दुनिया के जनवादी संघर्षों से बिल्कुल अलग-थलग हो जाने के कारण ही यह संभव हुआ हैं- आज पूरी दुनिया में सत्ता पर वही बैठता हैं? जिसे बहुराष्ट्रीय कम्पनियां चाहती हैं। फिर भी तीसरी दुनियां की संघर्षशील जनता अपने मोर्चे पर डटी हुई है।

• राजीव के चेहरे को उड़ाया गया

पाक में जिया-उल-हक की हत्या में उनका पूरा शरीर चिथड़े-चिथड़े कर दिया गया था शव की शिनाख्त जबड़े से की गई थी उसके बाद चुनाव परिणामों ने स्पष्ट किया कि चेहरा खत्म करने से सहानुभूति लहर नहीं बनी और जिया के हत्या के तुरन्त बाद बेनजीर चुनाव में विजयी हुई। जबकि १९८४ में श्रीमति गांधी के अक्षत चेहरे को दिखाकर कांग्रेस के पक्ष में सहानुभूति लहर बनाई गई। इस बार "वे" नहीं चाहते थे कि कांग्रेस के पक्ष में बहुत सहानुभूति उठे.....। और राजीव का चेहरा उड़ा दिया गया, शिनाख्त उनके जूतों से हुई।

• और यह भी पहली बार हुआ

स्वतंत्र भारत के इतिहास में इससे पूर्व? चुनाव हो चुके पर कभी भी चुनाव के पहले दौर व अंतिम दौर के दरम्यान ७ दिनों का अंतराल नहीं हुआ था। क्या तीन अलग-अलग तिथियों पर हफ्ते भर में होने वाले चुनाव तिथियों की घोषणा महज एक संयोग है अथवा यह भी राष्ट्रीय-अंतर्राष्ट्रीय साजिश का अंग है?

श्रीमति सोनिया गांधी को कांग्रेस (ई) की अध्यक्ष चुनकर भी लगता है भाजपा को कांग्रेस के विरूद्ध प्रचार हेतु एक नया अस्त्र देने का प्रयास किया गया।

श्रीलंका में ८० दशक के मध्य से पृथक तमिल राष्ट्र की मांग लेकर बहुत सी संस्थाओं की राजनैतिक गतिविधियां शुरू हुई ? जिसमें लिबरेशन टाइगर्स आफ तमिल ईलम (एल.टी.टी.ई) मुख्य धारा के रूप में उभरी। इसी एल.टी.टी.ई. पर भारत के प्रसिद्ध अमरिकी दलाल सुब्रमण्यम स्वामी एवं अमरिकी सैंकोमेन्टो नगर के छोटे अखबार राजीव के हत्या के आरोप लगातार लगा रहे है।

आतंकवाद वह है जो कि आतंक के सहारे एक दबाव पैदा करके नीति या पद्धतियों मे परिवर्तन की मांग करता है। और उनके पास व्यवस्था में गुणात्मक परिवर्तन का कोई कार्यक्रम नहीं रहा था जैसा कि उग्रवादी संस्थाओं का आम व्यवहार हैं, वे किसी भी आतंक –वादी कार्यवाही की जिम्मेदारी लेने में नहीं हिचकिचाते।

एल.टी.टी ई. के प्रवक्ता किट्टु दिनांक २५ मई को लंदन से अपने वक्तव्य में यह कहते हैं कि "राजीव गांधी की हत्या से एल.टी. टी.ई. का किसी भी प्रकार संबंध नहीं है।" उन्होनें यह भी कहा कि एल टी.टी.ई. के ऊपर यह आरोप लगाकर अन्तर्राष्ट्रीय षडयंत्रकारी तमिल जनता एवं विशेष रूप से एल. टी. टी. ई. के खिलाफ एक नयी साजिश में जद हय है।

एल.टी.टी.ई. का राजीव हत्याकांड से संबंध है या नहीं यह तो निकट भविष्य में स्पष्ट हो ही जायेगा। फिर भी हम यह चाहेंगे कि राजीव गांधी का एल.टी.टी.ई. संगठन से किस प्रकार का उतार–चढ़ावपूर्ण संबंध रहा इसकी संक्षिप्त जानकारी प्राप्त करें।

सन् ७० के दशक में जब श्रीलंका की मेहनतकश जनता जिसमें सिहली और तमिल दोनों शामिल थे वहां के साम्राज्यवादियों की पिठ्ठू सरकार के खिलाफ लाल झण्डा लेकर क्रांतिकारी संघर्ष में कूद पड़े थे। उस समय इंदिरा गांधी के नेतृत्व में भारत सरकार ने अपनी वायुसेना तक के भेजकर उस आंदोलन को कुचलने में सहायता दी। फिर एक निराशा का दौर गुजरने के बाद साम्राज्यवादियों के

सारे प्रयासों को नाकाम्याब करते हुए जनता विमुक्ति पेरामुना और एल.टी.टी.ई. ने वर्ग एवं राष्ट्रीयता के आधार पर सिहली और तमिल आबादी में अलग-अलग जन संगठन बनाकर प्रतिक्रियावादी श्रीलंका सरकार ने तमिल एवं सिहली सरकार को राष्ट्रीयताओं के बीच संघर्ष को आधार बनाकर उससे तमिल जनता के खिलाफ साम्प्रदायिक दंगा करवाकर उनने जन संघर्षों को दबाने का प्रयास किया।

जिस दिन तमिल राष्ट्रीयता के लोगों पर हमले पर हमले हो रहे थे उस समय राजीव गांधी के नेतृत्व में भारत सरकार ने एल.टी.टी.ई. के स्वयं सेवकों को तमिलनाडू के इलाकों में सैनिक प्रशिक्षण का एक कार्यक्रम शुरू किया था। भारत सरकार का उद्देश्य था कि इस तमिल गुट के सहारे वे श्रीलंका के सरकार के ऊपर अपना वर्चस्व बना सकेंगें। परन्तु ऐसा नहीं हुआ। प्रभाकरण के नेतृत्व में एल. टी.टी.ई. ने भारत सरकार के तमाम प्रलोभन व दबाव के प्रयासों के बावजूद भारत सरकार का पिठ्ठू बनने से इंकार कर दिया और तमिल और राष्ट्रीयता के हित को सर्वोपरि बनाकर रखा।

भारतीय सेना के आक्रमण को नाकाम्याब करने वाले एल. टी. टी. ई. आज भी श्रीलंका सरकार के दमन के खिलाफ प्रतिरोध संघर्ष जारी रखे हुए है।

अन्तर्राष्ट्रीय षड्यन्त्रकारी राजीव हत्या की जिम्मेदारी एल. टी.टी.ई. के मत्थे पर मढ़कर एक तीर से दो शिकार करना चाहते हैं। एक तो अपने काले कारनामों पर पर्दा डाल सके और दूसरी ओर भारतीय अंधराष्ट्रवाद को जगाकर मुक्ति चाहने वाली तमिल जनता पर खुखार भेड़ियों की नस्ल छोड़े।

भारत की जनता सिलसिलेवार हुई राजनेताओं की हत्याओं और तज्जनित राजनैतिक समस्याओं की गुत्थी सुलझाने के चक्कर में स्वयं भ्रमजाल में फंस गई है और तीसरी दुनिया में भारत के ८६ करोड़ जनता यदि इस भ्रांति से उबरकर मायावी भ्रमजाल से मुक्त

होकर राष्ट्रवादी चेतना से ओतप्रोत होकर नवधनाड्य वर्ग के खिलाफ तीव्र संघर्ष शुरू नहीं करेगी तो देश पर बहुराष्ट्रीय कम्पनियों का शिकंजा कसता जायगा। महंगाई, गरीबी, बेरोजगारी बढ़ती जायगी। जनता कीड़े-मकोड़ों का जीवन जीने मजबूर होगी। पानी पीते उम्र गुजर जायेंगी पर एक लकीर भी उभार न सकेंगे अपनी जमीन पर।

राजीव गांधी की दर्दनाक मृत्यु के बाद यह समय की पुकार है कि भारत में बहुराष्ट्रीय कम्पनियां के एजेन्टों यानि काले धन का जखीरा रखे नवधनाड्यों के खिलाफ देशप्रेमी जनवादी मोर्चे बने ताकि जनवादी आंदोलनों को कुचलने का सिलसिला रूके, रोज-बेरोज हो रही हत्यायें बंद हो, और गरीब जनता संगठित होकर आंदोलन रोजगार व सुखी व इज्जत की जिन्दगी की अपनी मांग हासिल कर सके और सर्वोपरि देश को बहुराष्ट्रीय कम्पनियों का चारागाह बनने से रोका जा सके।

शंकर गुहा नियोगी

(नवभास्कर, ३० मई व १ जून १९९१)

चौराहे पर खड़े देश को कौन दिशा देगा

आखिर दसवीं लोक सभा के लिये चुनाव सम्पन्न हो ही गये, शायद आजाद भारत के इतिहास में पहली बार चुनाव प्रक्रिया को एक लम्बी निश्चिता अनिश्चिता से गुजर कर आना पड़ा। इस बीच एक प्रखर दृढ़ संकल्प वाले महत्वकांक्षी राष्ट्रपति के अभाव में आपात काल का खतरा भी टल गया। अब अगले दो चार दिन में त्रिशंकु संसद की परिस्थिति को झेलते हुए एक सरकार अवश्य बन जाएगी। इस सरकार को स्थाई बनने के लिये हर प्रकार की कोशिश भी जारी रहेगी क्योंकि वर्तमान परिस्थिति में कोई भी राजनीतिक दल दुबारा चुनाव के नाम पर आम जनता के सामने जाने के लिए तैयार नहा हैं।

सरकार बनने में समस्या :– देश के कुछ बड़े औद्योगिक घराने व मझोले उद्योगपतियों ने यह सपना संजो रखा है कि कदाचित कांग्रेस और भाजपा गठबंधन से एक स्थाई सरकार बने, पर देश की वर्तमान राजनीति परिस्थिति शायद इनके सपने को साकार नहीं होने देगी। इस निर्वाचन से प्राप्त जनादेश भी इस विचार के प्रतिकुल है नागपुर के भाजपा उम्मीदवार एवं पूर्व कांग्रेसी सांसद बनवारी लाल पुरोहित की करारी हार, बसन्त साठे जैसे दिग्गजों को मार्क्सवादी कम्युनिष्ट पार्टी से शिकस्त, राजधानी में आडवानी जी जैसे दिग्गज की सामान्त विजय, उत्तर प्रदेश की राजनीति में कांग्रेस का मिट जाना एवं भाजपा तथा जद के दोनों ध्रुवों पर हो रहा ध्रुवीकरण इस बात का संकेत देता है कि कांग्रेस को अपने अस्तित्व बनाये रखने के लिए यह जरुरी होगा कि वह अगला कदम उठाने के पहले अब वाममोर्चे को अछूत नहीं माने बावजूद इसके कि कांग्रेसी घोषणा पत्र में इस बार 'समाजवाद' शब्द हा गायब है।

भाजपा का दंभ

आयोध्या के कार सेवा का संवार माध्यम की एक तरफा अतिरंजित समाचार जिस पर प्रहार भी मीडिया के ही एक हिस्से ने

किया, मुख्यमंत्री मुलायम सिंह ने भी इस धार्मिक उन्माद के विरुद्ध जनमत तैयार करने की अपेक्षा प्रशासनिक तंत्र के सहारे ही इसे कुचलने की कोशिश की जिस कारण भाजपा नेताओं के प्रति उत्तर-प्रदेश की जनता की उत्सुकता जगी फिर भाजपा के पूर्व अध्यक्ष लाल-कृष्ण आडवानी उत्तर प्रदेश में भाजपा की कल्पनातीत कामयाबी को अपने नेतृत्व का ही करिश्मा मानते है, आठवीं लोकसभा में २ सीटों से बढ़कर दसवीं लोकसभा में १०० से अधिक सीटे पाने में तात्कालिक रुप से यह सिद्ध भी हो जाता है। फिर भी इसके लिये देश को कितना भुगतना पड़ा ? कानून व्यवस्था की स्थिति में अभूतपूर्व गिरावट आई एवं जो धार्मिक उन्माद (ऋतुम्भरा के भाषणों के कैसेट से) से फैला। इसकी निंदा करने के लिये आज भी वे तैयार नहीं है एवं २ से ८७ से १०० के हिसाब से अगली छलांग के द्वारा केंद्र में सत्ता हथियाना भाजपा का एक मात्र लक्ष्य बना हुआ है। और यह सपना बजाज, गोयनका, बिरला घरानों की मजदूर विरोधी नीतियों के साथ तालमेल भी खाता है इस हालत में भाजपाई महत्वाकांक्षा एवं अहम उसे स्थायित्व के लिए कांग्रेस को मदद करने से रोकेगा।

अब राष्ट्रीय मोर्चा एवं वाममोर्चा का तालमेल

सबसे बड़ा घटक जद आज भी सिर्फ नेताओं की पार्टी है नेताओं के विरोधाभाषी बयान समय समय पर उजागर होते रहते है। इसलिये वर्तमान राजनीति संकट को एक अनुशासित दल के रुप में झेल पाना जनता दल के लिये संभव नहीं है। ऊपर से प्रो. मधुदंडवते जैसे सुलझे हुए राजनीतिज्ञों का संसद में न पहुंच पाने से भी जनता दल को एक जबर्दस्त धक्का लगा हैं। नम्बूदरीपाद, हरिकिशन सिंह सुरजीत एवं ज्योति बाबू के बीच का अंतर्विरोध भी अब छुपा नहीं है। पंजाब में चुनाव के मसले पर आज भी भा. क. पा. एवं मा. क. पा. के विचार भेद स्पष्ट हो चुके है जबकि वर्तमान परिस्थिति में मा.क.पा. बंगाल में सीमित एक क्षेत्रीय दल ही माना जाएगा। विशेषत: सोवि-यत रूस का अंतरराष्ट्रीय राजनीति में वर्चस्व कम हो जाने के बाद,

तृतीय विश्व की कोई भी कम्युनिष्ट पार्टी अब राष्ट्रीय स्तर पर उठने वाले मसलों पर अपनी स्वयं की राय बनाने लगे है। इस हालत में कम्युनिष्ट पार्टियां कब तक एक सुत्र में बंधी रहेंगी यह भी विचारणीय है। इतिहास साक्षी है कि भारत में कम्युनिष्टों की एकता सिर्फ अन्तर्राष्ट्रीय दबाव से ही संभव है। जद की वर्तमान औकात से निराशा की लहर भी तेज हुई है। श्री हेगडे ने अपनी राजनीति से सन्यास लेने की भंशा जाहिर कर दी है– शरद यादव भी पराजय का मुंह देख चुके है। समाजवादी खेमे की एक जुटता के बावजूद जद में सरसरी निगाह से देखने पर ही पता लगता है कि जद पर पूर्व कांग्रेसियों वी. पी. सिंह, अजीत सिंह आदि का वर्चस्व ही प्रमुखता रखता है। जद की सतही एकता की तह में बिखराव के कंकुर छिपे हुए हैं। भाजपा की अभूतपूर्व सफलता ने जद में आतंक पैदा किया है और इस आतंक के बने रहते तक अपने विरोधाभासी व्यक्तित्वों के बावजूद राष्ट्रीय मोर्चा, वाममोर्चा जद की एकता बनी रहेगी। अब भाजपा को उत्तर प्रदेश में सरकार बनाना है। जनता दल मुख्य विरोधी की जिम्मेदारी उत्तर प्रदेश में लेगा। भाजपा को उत्तर प्रदेश सत्ता पर असफलताएं जनता दल में व्याप्त आतंक को कम करेंगी पर राष्ट्रीय मोर्चा, वाममोर्चा में बिखराव की प्रक्रिया भी शायद वहीं शुरु होगी।

क्या कांग्रेस टूटेगी

स्वतंत्र भारत में पहली बार उत्तर प्रदेश और बिहार के मतदाताओं ने कांग्रेस को पूरा तरह नकारा है। राजीव जी की मृत्यु से प्राप्त संवेदना मतों के बावजूद इन राज्यों में कांग्रेस को सीट तो नहीं ही मिली बल्कि मतदाताओं के रुझान में आये घनात्मक परिवर्तन के बावजूद भी कांग्रेस अपनी उखड़ती जड़ों को न बचा सकी। जबकि हरियाणा, मध्य प्रदेश के कांग्रेस ने उल्लेखनीय कामयाबी हासिल की है। फिर भी इन प्रांतों की जीत के आधार पर निकट भविष्य में उत्तर प्रदेश बिहार में अपनी पूर्व स्थिति पर पहुंच सकेगा यह संदिग्ध है। निश्चित रुप से इस बार कांग्रेस की कमान सम्हालने वाले लोग

हिन्दी भाषी क्षेत्र के नहीं होंगे ऐसे स्थिति में कांग्रेस के कमान संहालने वाले नये प्रधानमंत्री को कांग्रेस का वर्चस्व सम्पूर्ण भारत में बरकरार रखने के लिये हिन्दी भाषी प्रदेशों–उत्तरप्रदेश, विहार, मध्यप्रदेश एवं राजस्थान को अतिकाय कृत्रिम संरचना पर ध्यान देना ही होगा तभी ये हिन्दी भाषी राज्यों पर स्थाई रुप से वर्चस्व कायम रख सकेंगे। विकास की दृष्टि से इसका औचित्य भी है। छोटे राज्य में हमेशा विकास दर तीव्र होती है इनका प्रबंधन अपेक्षाकृत आसान होता हैं। कानून व्यवस्था नियंत्रण की दृष्टि से भी छोटे राज्यों का निर्माण करना समय की महती आवश्यकता है।

(अन्तर्राष्ट्रीय परिदृश्य में परिवर्तन)– सोवियत रुस नेतृत्व वाले समाजवादी खेमों के पतन के बाद अमरीका, तृतीय विश्व पर हावी होने के लिये जी तोड़ मेहनत कर रहा है। यह सर्व विदित है कि कांग्रेस में दोनों ही– रुसी एवं अमरीकी खेमों के समर्थक मौजूद हैं फिर भी कांग्रेस एक मध्यमार्गी दल हैं। क्या कांग्रेस का नया नेतृत्व अंतर्राष्ट्रीय राजनीतिक परिदृश्य में आये तूफान के दौरान कांग्रेसी जहाज को संतुलित रखकर आगे ले जा पायेगा या हवा का रुख ही इनका मार्ग निर्धारित करेगा ? वर्तमान अंतर्राष्ट्रीय राजनीति में आये समुद्री तूफान जैसे प्रतिकूल वातावरण में नाव को वांछित मध्यमार्गी दिशा में चला पाना क्या संभव हो सकेगा ? वर्तमान संसद में राष्ट्रीय मोर्चा, वाममोर्चा की सौ से अधिक सदस्यों की उपस्थिति हम मामले में सहायक सिद्ध हो सकती है।

वर्तमान अंतर्राष्ट्रीय परिवेश में यह भी सिद्ध हो चुका है कि तृतीय विश्व में जहां जहां अचानक दक्षिण पंथ की ओर झुकाने की कोशिश को गई वहां जन आन्दोलन प्रबल हुआ वहां निकारागुहा, फिलीपीन्स सहित तालिन– अमरीकी एवं आफ्रीकी देशों में हो रही वर्तमान हलचल इसका सबूत है।

ऐसी परिस्थिति में कांग्रेस के नेतृत्व के लिये होने वाली प्रारंभिक खींचतान के बाद द्वितीय चरण में कांग्रेस दल अपनी स्थिति

को सम्हाल लेगी पर आज की स्थिति में काग्रेस के टूटने की संभालना को पूरी तरह नकारा नहीं जा सकता ।

स्थायित्व का सवाल जन समस्याओं का अंबार

स्थायित्व के सवाल पर सभी एक का मत है । "बार-बार चुनाव कोई भी नहीं चाहता" दसवें लोक सभा के जरिये यह कल्पना करना कि १. देश के १५ करोड़ बेरोजगारों को रोजगार मिलेगा २. महंगाई पर रोक लगेगी ३. पंजाब कश्मीर पूर्वांचल राज्यों में जन-जीवन सामान्य हो जायेगा ४. पुलिस एवं फौज अपनी बैरकों में चले जायेगें ५. आदिवासी क्षेत्रों की मूलभूत समस्याओं से जूझ रहे वन-वासियों को भी जीपनोपयोगी वस्तुए सुलभ हो सकेगी ६. क्षेत्रों में महिलाएं बेखौफ चल सकेगी एवं सबसे ऊपर हमारे देश के आयात-निर्यात में संतुलन कायम हो सकेगा । विदेशी मुद्रा का भंडार भी आवश्यकता की पूर्ती लायक बना रहेगा- देशी एवं विदेशी कर्ज पर यदि सरकार निर्भर नहीं होकर स्वावलंब की ओर बढ़ेगी? अपने मंगलसूत्रों को अमरीकी बाजार में गिरवी न रखे यह एक देशप्रेमी एवं जनवादी सरकार का यह कर्तव्य होता हैं ।

नई सरकार और आर्थिक चक्रव्यूह

नई सरकार के सामने देश के विकास को गति देने का सवाल द्वितीय वरीयता है... प्रथम वरियता यह है कि ८० हजार करोड़ विदेशी कर्ज के व्यय सहित किश्त की अदायगी कैसे हो ? इसीलिये बार-बार यह सवाल उठतां हैं कि आई.एम.एफ. से क्यों न फिर से कर्ज लेकर काम चलाया जाये भले ही उसके लिये नव उपनिवेशवादियों की अपमान जनक शर्तो को स्वीकार करना पड़े । हमारी नेहरु रचित मिश्रित अर्थनीति की सबसे बड़ी कमजोरी यह रही कि हम सहायता के नाम पर कर्ज लेने के आदि बन चुके है । वर्तमान परिस्थिति में आई. एम. एफ. से सहायता के नाम पर अंतर्राष्ट्रीय मुद्राकोष से कर्ज की कट्टर विरोधी कम्युनिष्ट पार्टियां भी धीरे-धीरे उसे मंजूर करने

की मानसिकता बनाती जा रही है। भौतिक शास्त्र का यह वैज्ञानिक सिद्धांत है कि किसी पर विशिष्ट स्थिति से दूसरी स्थिति में प्रत्यारोपित करना कब तक संभव नहीं होता जब तक कोई जबर्दस्त शक्ति उसे प्रभावित न करें। वर्तमान व्यवस्था में देश में कर्ज लेने की प्रवृत्ति पर रोक लगाने के लिए भी इसी नियम के अनुसार देशद्रोही आधुनिकीकरण के खिलाफ देशप्रेमी आधुनिकीकरण की नीति को स्थापित करना होगा। उदाहरण के लिये सिर्फ इस्पात उद्योग में पिछले ५ सालों में १५ हजार करोड़ रुपये का आधुनिकीकरण पर खर्च हुआ उसके बावजूद भी हम ८० लाख टन के स्थान पर १०० लाख टन का भी उत्पादन लक्ष्य हासिल न कर पाये। इसके विपरीत यह स्थिति पैदा हो गई है कि आस्ट्रेलियाई आयातित कोयले के बिना हमारी धमन भठ्ठियां बंद होने के स्थिति में आ गई है अर्थात विदेशों पर निर्भरता और बढ़ गई है। यह एक देशद्रोही आधुनिकीकरण था जिसे भाजपा के जय दुबसी जैसे अर्थशास्त्री से लेकर कांग्रेस के पूर्व नेतागणों ने मंजूरी दी थी एवं कम्युनिष्टों ने भी इसका स्वागत किया था। पूर्व में हमारे इस्पात कारखाने भारत में ही उपलब्ध कोयले पर निर्भर थे और इस्पात कारखाने में ऊर्जा स्रोत के रुप में लिग्नाईट के प्रयोग करने पर भी विचार चल रहा था। इंग्लैंड की लीड्स विश्वविद्यालय का टैक्सटाइल (वस्त्र) विभाग आज भारत के सूती मिलों को दिशा निर्देशन दे रहा है आज से २०० वर्ष पूर्व हमारे ढाका के मलमल बनाने वाले कारीगरों का अंगूठा काटने वाले जिन अंग्रेजों ने प्रारंभिक उद्योगों में संकट लाया था उन्हीं के वंशज आज नये तकनीकी तलवार से हमारे लाखों बुनकरों एवं मिल मजदूरों का सिर काटने के लिये तलवार मांज रहे है। इन नीतियों के चलते देश पर एक तरफ कर्ज का बोझ बढ़ता जा रहा है। मुद्रास्फीति–घोषित और अघोषित– अनिवार्यता बन गई है और हम अपने देश की मूलभूत समस्याओं के निराकरण के लिये एक स्थाई सोच भी नहीं बना पा रहे है। इस सिलसिले में यह उल्लेखनीय है कि अपमान जनक शर्तों पर आई. एम. एफ का कर्ज हमारी समस्याओं से निदान का रास्ता नहीं है बल्कि यह देशद्रोही आधुनिकीकरण के नाम पर हमारी आर्थिक आजादी के प्राण भी ले लेगा।

संसद के भीतर हमारे विद्वान सांसद इस पर कुछ भी न कर सकेंगे ! एक व्यापक देशप्रेमी द जनवादी जन संगठन को इसके खिलाफ एक जबर्दस्त जनमत अभियान चलाया होगा जनांदोलन के जरिये कर्जा लेने की प्रवृत्ति पर तीव्र प्रहार करके ही हम सरकार को इस प्रवृत्ती से विमुख कर सकेंगे।

यह विडम्बना ही कही जायेगी कि हम कश्मीर, पंजाब सहित देश के अन्य क्षेत्रों में चल रहे आतंकवाद से भी मुक्ति पाना चाहते है पर हमारी राजनीति में शस्त्र व्यापारी खागोशी और चन्द्रास्वामी की शर्मनाक उपस्थित से भी कोई बुद्धिजीवी व्याकुल नहीं होता। क्या शस्त्र व्यापारियों की भारत की राजनीति में बेरोकटोक निर्लज्ज उपस्थिति देश में अशांति के लिये जिम्मेदार नहीं ? यह भी एक विडम्बना ही है कि देश में विदेशी दवा कम्पनियां प्रतिवर्ष करोड़ों रुपयों का मुनाफा कमाते है और बस्तर जैसे पिछड़े इलाकों में प्रतिवर्ष हजारों लोग सिर्फ शुद्ध पेयजल के अभाव में पेचिस की बीमारी से कालकवलीत होते है।

एक साकारात्मक लक्षण– यह सच है कि उत्तर प्रदेश एवं गुजरात में भाजपा को अभूतपूर्व सफलता मिली और मध्य प्रदेश, हिमाचल प्रदेश, राजस्थान में रामशीला पूजन की तात्कालिन तर्कहीन भावना वास्तविकता के तथ्य से ध्वसत हो चुकी है। जहां जहां भाजपा की सरकारे थी वहां वहां ही भाजपा को मात मिली।

उत्तर प्रदेश में भाजपा को और भी कठिन एवं प्रतिकूल परिस्थितियों का सामना करना होगा। आम जनता का एक हिस्सा अब भाजपा से लगातार यह मांग करते रहेंगे कि अयोध्या का राम मंदिर एक समय बद्ध कार्यक्रम के तहत निर्मित किया जावे। यह मांग जितनी प्रबल होती जाएगी जन समस्याएं सत्ता पुरुषों के नजर से दूर होती चली जाएगी क्योंकि मस्जिद गिराना असंभव है इसोलिये भाजपा के गरम दल (बजरंग दल, विश्वहिन्दू परिषद, शिवसेना आदि) की

भाजपा नेतृत्व से ही टकराव की स्थिति बनेगी। जिस राम मंदिर के शिलापूजन से भाजपा का उत्थान/विजय अभियान प्रारंभ हुआ उसी रामशिला के नीचे भाजपा का दमन होने का खतरा भी मौजूद है। छोटे राज्यों की मांग को समर्थन देकर उत्तराखण्ड, झारखण्ड आदि क्षेत्रों में समर्थन एवं सीटें बीनने वाली भाजपा को अब स्पष्टतः अपने काम से बताना होगा कि वे सम्बद्ध क्षेत्रों की जन आकांक्षाओं के प्रति कितने कटिबद्ध है।

बढ़ता उपभोक्तावाद भी देश की राजनीतिक अस्थिरता के लिये जिम्मेदार है उपभोक्तावादियों ने देश को दो टुकड़ों में विभक्त कर दिया है। एक तरफ देश की वह ३० करोड़ जनता है जिनकी क्रय क्षमता कुछ अधिक हैं तो दूसरी तरफ वे ५० करोड़ लोग है जो जीवनोपयोगी वस्तुए जुटाने में भी असमर्थ है। उपभोक्तावादियों की योजना की धारा ३० करोड़ जनता तक पहुंचते पहुंचते ही लुप्त हो जाती है। विकास की गंगा को अन्य ५० करोड़ जनता तक पहुंचाने में इसकी कोई रुचि ही नहीं होती जिससे लगातार असमान विकास का दर चलता है। सकारात्मक रुप से विषम विकास के दौर के चलते ही आज क्षेत्रीय/प्रांतीय स्वायत्तवा की मांग तेजी से बढ़ती जा रही है और संघवाद की बात हो रही है नकारात्मक रुप से अराजकता और आतंकवाद भी पनपता जा रहा है और यह स्वाभाविक भी है। फिर भी हरहाल में बढ़ते हुए उपभोक्तावादी प्रवृत्ति पर अंकुश लगाना आज की सबसे महत्वपूर्ण आवश्यकता हैं। उपभोक्तावाद के हावी रहते तक स्थायित्व की बात करता वास्तविकता से भागने के अलावे कुछ भी नहीं। फिर आई.एम. एफ. का कर्ज लिया जायेगा बी.डी.ओ. से लेकर मंत्रियों तक कमीशन बांटा जायेगा और हम स्थाई सरकार का ख्वाब लेकर हर दूसरे साल आम चुनाव करवाकर अरबों रुपयों की होली जलाते रहेंगे। इस प्रवृत्ति के विरुद्ध स्थाई सरकार के लिये देश की मूलभूत समस्याओं से स्थाई रुप से मुक्ति पाना नितांत जरुरी है और वह सिर्फ एक देश प्रेमी, जनवादी, राजनीतिक, आर्थिक, सांस्कृतिक संरचना से ही संभव हैं।

दसवीं लोकसभा सिर्फ भारत के वर्तमान राजनीतिक आर्थिक संकट को घटाने या बढ़ाने के लिए जिम्मेदार नहीं रहेगी बल्कि तृतीय विश्व का स्वाभाविक अगुवा होने के कारण सम्पूर्ण तीसरी दुनिया के राजनीतिक आर्थिक संकट को घटाने या बढ़ाने की भी जिम्मेदारी इसी पर रहेगी। देश के इस संकट काल में देशप्रेमी बुद्धिजीवियों का यह कर्तव्य है कि संकट को और भी घनीभूत करने के लिए जिम्मेदार लालची, नवधनाढ्य वर्ग के ऊपर अंकुश लगाने के लिए जन भावना को उद्दीप्त करें ताकि देश अराजकता की स्थिति से उबरकर एक वैचारिक मंथन के जरिये राष्ट्रवादी अर्थनीति निर्माण कर सके एवं चौराहे पर खड़ी भारत की राजनीति को सही दिशा देकर एक सुख-शांति वाले मार्ग पर आगे चलने का निर्देश दें।

शंकर गुहा नियोगी

(नवभास्कर २२ व २५ जून १९९१)

वह जिन्दा है जनता के बीच
जनता जन्म देती है शहीदों को
ओ हत्यारों !
तुम जान ले सकते हो विप्लवियों की
लेकिन
क्या तुम मार सकते हो
विचारों को.....

नियोगी जो व्यक्ति थे, वे आज नहीं रहे। वर्ग संघर्ष में वे शहीद हुए। पर नियोगी जो एक संघर्ष का, जो एक विचार का नाम है, वह मरा नहीं है, वह आज भी जिन्दा है, और जिन्दा रहेगा.....